International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 15 Issue 04, April 2025,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081 UGC Approved
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

हिन्दी पत्रकारिता को अज्ञेय संपादित 'प्रतीक' एवं 'नया प्रतीक' का प्रदेय

डॉ. श्याम शंकर सिंह, प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग
राजीव गांधी विश्वविद्यालय, रोनो हिल्स, दोईमुख, ईटानगर
Email: sssingharunachal@gmail.com

अज्ञेय में पत्रकारिता के प्रति लगाव किशोरावस्था के प्रारम्भ से ही रहा । पत्रकारिता ने उनकी रचनाशीलता को बढ़ावा दिया और प्रभावित किया । रचनाशीलता ने उनकी पत्रकारिता दृष्टि के उन्मीलन में उल्लेखनीय भूमिका निभाई । अज्ञेय की पत्रकारिता दृष्टि प्रखर है। उनकी पत्रकारिता दृष्टि अलग से पहचान बनाती है । अज्ञेय के साहित्य को समझने के लिए भी पत्रकारिता दृष्टि का अनुशीलन आवश्यक है । उनकी पत्रकारिता दृष्टि के वैशिष्ट्य को समझने के लिए उनके साहित्य का अनुशीलन भी आवश्यक है । अज्ञेय का पत्रकारिता चिंतन भी उल्लेखनीय है । उनके पत्रकारिता और पत्रकारिता चिंतन की प्रासंगिकता वर्तमान संदर्भों में भी विवेचना की अपेक्षा रखती है ।

जून 1947 से अज्ञेय ने इलाहाबाद से 'प्रतीक' का सम्पादन-प्रकाशन प्रारम्भ किया । 1948 ई. तक प्रतीक इलाहाबाद से प्रकाशित होता रहा । 1952 के अंत तक प्रतीक प्रकाशित हुआ । इसके बाद उसका प्रकाशन बंद हो गया । लगभग चार वर्षों तक चलने वाली यह पत्रिका पहले द्विमासिक थी । बाद में यह मासिक रूप में जून 1951 ई. से दिल्ली से निकलने लगी । प्रतीक की योजना में यह विचार भी निहित था कि इसे 'मुख्यतया लेखकों के सहयोगमूलक उद्योग' के आधार पर चलाया जाय, लेकिन शीघ्र ही यह स्पष्ट हो गया कि 'अपने बूते ही पत्रिका को निकालना होगा'। अज्ञेय पत्रिका में प्रकाशित लेखकों को पारिश्रमिक भी देते थे । रघुवीर सहाय ने अपने एक साक्षात्कार में कहा है-" 'प्रतीक' के 8वें,11वें और 12वें अंक में न केवल मेरी कविताएँ छापी वरण यथेष्ठ पारिश्रमिक भी दिया ।"[1] कविता विधा के संदर्भ में यह प्रसंग विशेष रूप से उल्लेखनीय है । 'प्रतीक' ग़ैर सरकारी उपक्रम की पत्रिका थी । अनुमान के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आज भी कुछ ही पत्रिकाएँ होंगी जो कविता प्रकाशित करने पर कवि को पारिश्रमिक देती होंगी ।

'प्रतीक' के प्रवेशांक के सम्पादक थे- सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन, नगेंद्र नगाइच, श्रीपत राय और नेमिचंद्र जैन । नेमिचंद्र जैन सहायक सम्पादन थे और वैतनिक रूप से कार्य करते थे । शेष अवैतनिक रूप से कार्य करते थे । दूसरे अंक से सियारामशरण गुप्त भी जुड़ जाते हैं । जुड़ने से तात्पर्य जुड़ना भर नहीं था । अज्ञेय "सम्पादकीय परामर्श के लिए" सियारामशरण गुप्त के पास चिरगाँव तक चले जाते थे ।[2] अज्ञेय ने अपना और फिर सहायक सम्पादक का नाम सबसे

नीचे रखा था । दूसरे अंक में सियारामशरण गुप्त का नाम सबसे ऊपर रखा गया । अर्थात् पुरानी पीढ़ी को यथोचित आदर दिया गया । तीसरे अंक से नेमिचंद्र जैन हट जाते हैं। जिस तरह से बाद में नया प्रतीक को अवरोधों का सामना करना पड़ा, उसी प्रकार प्रतीक को भी अवरोधों से गुजरना पड़ा । उस समय के शीत युद्ध के वातावरण में कुछ कट्टर कम्युनिस्ट साहित्यकार अज्ञेय के घोर विरोधी थे । भारतभूषण अग्रवाल और नेमिचंद्र जैन कम्युनिस्ट पार्टी के निर्देश से 'प्रतीक' को 'अंदर से कमजोर करने के लिए भेजे गए थे' । प्रयाग में अज्ञेय को 'यथोचित सहयोग नहीं मिल रहा था' और 'प्रतीक' को चलाने का दायित्व और मंसूबा ऊपर से था । इसलिए वे 'थॉट' पत्रिका के सम्पादन मंडल में बुलाए जाने पर दिल्ली चले गए । जब 'प्रतीक' दिल्ली से प्रकाशित होने लगा तब संपादक स.ही. वात्स्यायन ही रहे। पहले के सम्पादन-सहकार के कुछ सदस्य और अन्य साहित्यकार पत्र से सलाहकार के रूप में सम्बद्ध हो गए। मई 1951 **ई. से रघुवीर सहाय सहायक सम्पादक बनाए गए। रघुवीर सहाय उस समय बाईस के भी न हुए थे। रघुवीर सहाय ने अपने एक इंटरव्यू में उस समय को याद करते हुए कहा है– "मुझे 'प्रतीक' में बुलाकर उन्होंने बहुत सम्मान तो दिया ही, जो मेरे लिए बहुत बड़ा अवसर था।"[3] यह रचनाकार पत्रकार अज्ञेय की दृष्टि का वैशिष्ट्य है कि उन्होंने एक नवोदित रचनाकार को पहचाना और नवोदित रचनाकार में पत्रकारिता कर्म विषयक प्रतिभा और सम्भावना को भी पहचाना । रघुवीर सहाय ने स्वीकार किया है कि "मुझे ज़िम्मेदारी दी जाये या नहीं, इसकी कड़ी जाँच वे अपने ढंग से करते रहे । मेरी रुचियों की, मेरी अध्यवसाय की क्षमता की, मेरी सम्भावनाओं की बड़ी सूक्ष्म परख उन्होंने की ।"[4]**

प्रतीक के स्वरूप की व्यापकता की प्रतीति उसमें प्रकाशित सामग्री की विविधता से हो सकती है । प्रभाकर माचवे की कविता प्रतीक के पहले या दूसरे अंक में प्रकाशित हुई और कहानी भी । रघुवीर सहाय ने 'वात्स्यायन के साथ फ़िल्म-समीक्षा भी की'। रघुवीर सहाय का मानना है कि 'प्रतीक' को अज्ञेय 'कला, साहित्य और संस्कृति का एक अद्भुत संगम बनाना चाहते थे ।' प्रतीक के पहले अंक में अमृता शेरगिल पर रामचंद्र टंडन का लेख प्रकाशित हुआ । प्रभाकर माचवे ने इस अवधि में अज्ञेय के पत्रकार रूप की विशेषता का अनुशीलन करते हुए लिखा है कि "एक-एक लेख मनोनुकूल जुटाने के लिए वे बड़ा परिश्रम करते । सम्पादक के नाते वे निम्न बातों का ध्यान रखते थे, जो शायद महावीर प्रसाद द्विवेदी के बाद बहुत कम हिंदी साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादक कभी रख पाते हैं । ...वे गुण यों हैं: 1.प्रत्येक अंक में सामग्री की विविधता के साथ चमत्कार पैदा करना, स्तर रखना, 2.मित्रों के भी लेख या रचनाएँ बे-मुरौवत लौटाना, 3.नए-नए लेखकों से लिखवाना, उन्हें प्रोत्साहित करना, 4.एक-दो कालम स्वयं लिखना, छद्म नाम से या गोपन रूप में-पर वह सर्वथा अनूठे रखना, 5.लेखानुकूल सजावट, रेखाचित्र, कवर फ़ोटो आदि में वैभिन्य का ध्यान रखना, 6.हिंदी को अन्य प्रादेशिक साहित्यों और अंतरराष्ट्रीय साहित्यों के नवीनतम प्रयोगों से अवगत रखना ।"[5] माचवे ने प्रतीक काल में सम्पादक अज्ञेय के प्रयासों का संक्षिप्त उल्लेख करने के क्रम में जो

बातें लिखी हैं, उससे पत्रकारिता दृष्टि के वैशिष्ट्य के बारे में पता चलता है-"एक बार...शिशिर संबंधी सामग्री जुटानी थी । मैंने कई विचित्र उद्धरण, अंग्रेज़ी कविता के अनुवाद आदि जमा किए ।" "वैसे ही एक ही पुस्तक पर अनेकों की 'रिव्यू' या एक ही प्रसंग जैसे 'युद्ध और लेखक' पर अनेक लेखकों का परिसंवाद या साहित्य के साथ ललित-कला सम्बन्धी लेखों के लिए विशेष रूप से परिश्रम करके शांता राय या जिज्जा या अमरनाथ सहगल पर लेख जुटाना ये सब हिंदी में पहली बार उन्होंने किया । वात्स्यायन जी के सम्पादन में अंतरराष्ट्रीय स्तर की गुणवत्ता थी ।...रघुवीर सहाय को तब वात्स्यायन सह सम्पादक के रूप में लाए और उन्हें ट्रेंड किया"[6] माचवे ने प्रतीक में 'प्रज्ञाचक्षु', 'सुमतिबंधु', 'सव्यसाची', 'प्र-मा' नाम से कई चीजें लिखीं-समीक्षाएँ भी, कविताएँ भी और कहानी भी!

विद्यानिवास मिश्र ने 'प्रतीक' के प्रसंग में कुछ ऐसे पहलुओं को उद्घाटित किया है जिन्हें आज हम अन्य किसी स्रोत के अभाव में नहीं जान सकते- "प्रतीक में 'अज्ञेय' ने अपना सब कुछ लगाया और उसमें इतनी आर्थिक हानि सही कि उस हानि को पूरा करने के लिए उन्हें 1963 तक कठोर परिश्रम करना पड़ा...। 1950 में प्रतीक के ही लिए इन्होंने दिल्ली में रेडियो की नौकरी स्वीकार की और दो वर्ष तक इन्होंने अपने बूते पर पत्र को चलाया । 1952 तक प्रतीक चलता रहा और उसका स्तर कभी गिरा नहीं । आज तक वैसा उच्च स्तर का पत्र नहीं आया और आज भी उनके मन में प्रतीक की सुवास बनी हुई है ।"[7] रामकमल राय ने भी लिखा है कि " 'प्रतीक' के सम्पादक के रूप में उन्होंने एक पाठ अच्छी तरह से पढ़ लिया था कि हिंदी पाठकों के भरोसे किसी साहित्यिक पत्रिका का आर्थिक बोझ वहन करना सम्भव नहीं है ।...'प्रतीक' अज्ञेय के लिए कमरतोड़ क़र्ज़ का कारण बनी । पत्रिका चलाने के संकल्प ने उन्हें लगातार आर्थिक कठिनाई और क़र्ज़ के दलदल में घसीटा ।"[8] विद्यानिवास मिश्र की टिप्पणी है कि प्रतीक का "बंद होना नए साहित्य की स्वीकृति की दृष्टि से एक विडम्बनापूर्ण घटना है । 'प्रतीक' ने नए साहित्य को स्वीकृति दिलायी, नए आलोचक पैदा किए, परंतु वे प्रतीक को चला न सके ।" रामकमल राय का भी कहना है कि 'प्रतीक' के माध्यम से प्रकाश में आए कई दर्जन हिंदी के कवि और लेखक बाद में प्रसिद्धि के शिखर पर पहुँचे । लेकिन नामवर सिंह का मानना है, "उस पत्रिका ने जब अपनी भूमिका पूरी कर ली, तो सम्पादक ने उसको बंद कर दिया ।"[9] अपने एक साक्षात्कार में अज्ञेय ने एक कारण यह बताया है कि "प्रतीक के बंद होने का...एक प्रकाशक की धूर्तता से सम्बंध था ।"[10] वैसे भी 'प्रतीक' का सम्पादन प्रकाशन सहकारी तथा सह जीवन के प्रयास का परिणाम था । इससे सम्बंधित अनुभवों के बारे में अज्ञेय ने अपने एक साक्षात्कार में जो कहा है उससे भी प्रतीक की कठिनाइयों के बारे में जाना जा सकता है -"इलाहाबाद का प्रतीक प्रयोग सफल भी हुआ और असफल भी हुआ । पूर्वग्रह, दुर्भावना या योजना ले कर आने वालों की बात तो छोड़ दीजिए, असफलता का एक कारण यह भी था कि उसमें कुछ ऐसे लोग भी शामिल थे जिन्हें उस से तुरंत पहले सहकारी जीवन के नाम पर केवल आज्ञाकारी जीवन का अनुभव हुआ था ।

सहज आत्मतंत्र में रहना उन्हें नहीं आता था- वे या तो बताए हुए नियम पर चल या चला सकते थे, या फिर बिल्कुल स्वैराचारी हो कर रह सकते थे ।" अज्ञेय ने इस प्रसंग पर टिप्पणी करते हुए लिखा है, "और जिस तरह के सहकारी सहजीवन की योजना हमारी थी उसमें इन दोनों प्रकार के अतिवाद के लिए स्थान नहीं था । उसमें कभी हो भी नहीं सकता । वैसा जीवन तभी सम्भव है जब उसमें भाग लेने वाले सभी लोग इतने स्वस्थ-संतुलित और स्वाधीनता के अभ्यस्त हों कि नियम अथवा संयम का स्वेच्छा से वरण कर सकें । किसी के बताए हुए नियम से नहीं, प्रतिभा ज्ञान से दूसरे का सम्मान करते हुए ऐसे ढंग से रह सकें कि सभी का समान हित और सुख उससे सिद्ध हो।" बीस साल बाद भी वे अपने इस विश्वास पर टिके थे कि, "ऐसे लोग आज भी मिल जाएँ तो उनके साथ उस ढंग से रहना मुझे अच्छा लगेगा । वैसे लोग न मिले तो वैसा प्रयोग मैं नहीं करूँगा; फिर भी विशिष्ट और स्पष्टतया निर्धारित लक्ष्यों के लिए सीमित ढंग का सहकारी प्रयत्न करना चाहूँगा । बल्कि कह सकता हूँ कि करता रहता हूँ ।"[11] निश्चय ही इन सबसे 'प्रतीक' के बंद होने के कारणों पर प्रकाश पड़ता है ।

'प्रतीक' में जिन लेखकों की रचनाएँ छपीं उनसे अज्ञेय की समावेशी दृष्टि का पता चलता है । यह उनके साहित्य के पुनर्मूल्यांकन के नए द्वार की संभावना को भी दर्शाता है । द्वि-ध्रुवीय विश्व के दौर में, शीत युद्ध के दौर में अज्ञेय के कृतित्व का जिस तरह से मूल्यांकन किया गया उस मूल्यांकन की अपर्याप्तता को पहचाना जाना चाहिए, अज्ञेय के कृतित्व के पुनर्वलोकन की आवश्यकता को महसूस किया जाना चाहिए । उत्तर आधुनिक दौर में और उत्तरआधुनिक दौर के पश्चात् अज्ञेय का कृतित्व बदली हुई दृष्टि के परिप्रेक्ष्य में फिर से विवेचन की माँग करता है ।

अज्ञेय ने प्रतीक के माध्यम से अपनी विचक्षण साहित्य दृष्टि का परिचय दिया । इसका प्रमाण यह है कि उन्होंने समकालीन रचनाशीलता की पहचान की। समकालीन रचनाशीलता की पहचान एक मौलिक साहित्य चिंतक से ही सम्भव है । दृष्टि की समकालीनता सामान्य गुण नहीं है । रचना और आलोचना का सामंजस्य साहित्य के प्रगति का सूचक है । अज्ञेय के आलोचना कर्म में प्रवृत्त होने का एक कारण यह भी था कि उस समय के कई आलोचक समकालीन साहित्य सृजन को पहचानने में चुकी हुई दृष्टि का प्रमाण दे रहे थे । दूसरे सप्तक की भूमिका में सम्पादक ने इस ओर संकेत किया है । रामकमल राय ने ठीक ही लिखा है कि "पूरे हिंदी संसार में नवीन कृतित्व एवं सृजनात्मक प्रयासों को पहचानना, परखना तथा उन्हें प्रकाश में लाने का कार्य 'प्रतीक' ने करना प्रारम्भ कर दिया ।"[12] 'प्रतीक' के पहले अंक के लेखक थे- मैथिलीशरण गुप्त, शिवमंगल सिंह 'सुमन', गिरिजाकुमार माथुर, हरिवंश राय 'बच्चन', प्रभाकर माचवे, नेमिचंद्र जैन, नरेंद्र शर्मा, सुमित्रानंदन पन्त और अज्ञेय। दूसरे अंक के लेखकों में इलाचंद्र जोशी, गजानन माधव मुक्तिबोध, देवराज, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', भगवतशरण उपाध्याय, भवानीप्रसाद मिश्र,

भारतभूषण अग्रवाल, रांगेय राघव, वृंदावनलाल वर्मा, शमशेर बहादुर सिंह, वत्सराज, सत्यवती मलिक, सत्येंद्र 'शरत' और सेठ गोविंद दास हैं । केवल बच्चन को पुनः जगह दी गयी है । प्रतीक में कई पीढ़ियों के भावधारा वैशिष्ट्य सम्पन्न रचनाकारों को जगह मिली । इसमें एक ओर मैथिलीशरण गुप्त, सियारामशरण गुप्त, 'नवीन', वृंदावन लाल वर्मा, 'सुमन' जैसे रचनाकार प्रकाशित हुए तो इनसे अगली पीढ़ी के बच्चन, नरेंद्र शर्मा, दिनकर आदि भी प्रकाशित हुए । तत्कालीन नयी पीढ़ी के रचनाकारों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं- नागार्जुन, शमशेर, त्रिलोचन, प्रभाकर माचवे, गिरिजा कुमार माथुर, भारत भूषण अग्रवाल, मुक्तिबोध, धर्मवीर भारती, कुंवरनारायण, अमृत राय और कृष्णा सोबती । इसके अलावा लक्ष्मीनारायण मिश्र, जैनेंद्र कुमार, बाबू गुलाब राय, आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी, विष्णु दे, गोर्की, सज्जाद ज़हीर, प्रकाशचंद्र गुप्त, भगवतशरण उपाध्याय, अमृत राय भी प्रकाशित हुए । राहुल सांकृत्यायन और यशपाल पर भगवतशरण उपाध्याय और अश्क़ के निबंध प्रकाशित हुए । इस तरह प्रतीक में संवादिता बहुवचनात्मक थी । भिन्न-भिन्न विचारधाराओं वाले साहित्यकारों को अज्ञेय ने जगह दी । यह अज्ञेय की पत्रकारिता दृष्टि का वैशिष्ट्य है । 1948 के पावस अंक में रघुवीर सहाय की लम्बी कविता 'सायंकाल' छपी थी । तब वे मात्र अठारह साल के थे । रघुवीर सहाय की "प्रतीक के दो अंकों में और भी कविताएँ आयीं ।"[13] अभिप्राय यह है कि बाद में जो रघुवीर सहाय ने हिंदी के एक बड़े कवि के रूप में पहचान बनायी उसमें प्रतीक के योगदान को अस्वीकार नहीं किया जा सकता! मनोहरश्याम जोशी, विद्यानिवास मिश्र और 'नयी कविता' के अनेक कवि प्रतीक के माध्यम से प्रकाश में आए । पुराने बड़े कवियों-लेखकों की रचनाएँ तो प्रतीक में छपीं ही, हर अंक में कुछ नए संभावनापूर्ण रचनाकारों की रचनायें भी छपती रहीं ।

प्रतीक अंक-1 (ग्रीष्म अंक) में प्रतीक के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए कहा गया है- "प्रतीक आधुनिक हिंदी के समूचे साहित्यिक कृतित्व का प्रतिनिधित्व करेगा...साहित्य के निर्माण, रूप-संस्कार और विकास के साथ जिन मानवीय उद्योगों का सम्बंध है, उनकी ओर अवश्य ध्यान दिया जाएगा ।" साहित्य के निर्माण, रूप-संस्कार और विकास के साथ अनेक प्रकार के मानवीय उद्योगों का सम्बंध होता है । यहाँ अज्ञेय की साहित्य मीमांसा और समालोचना के सूत्र भी उल्लिखित हैं । अज्ञेय "साहित्य को आकाश-बेल नहीं मानते" । वे साहित्य विज्ञान को उद्यान विज्ञान के रूपक से व्यंजित करते हुए कहते हैं कि "जिस धरती से वह उगता है, जिस आतप से हरा होता है, जिस समीकरण से फूलता है- और जिस लू में वह झुलसता, जिस पाले से मरता अथवा व्याधियों से ग्रसित होता है-वे सब सृष्टि से सम्बद्ध हैं और उनका अध्ययन, विवेचन, मापन, ग्रहण, प्रचार, प्रसार नियमन और निराकरण साहित्य-कर्म का अनिवार्य अंग है । इसीलिए 'प्रतीक' के लिए 'विशुद्ध साहित्यिक विषयों से आगे बढ़कर साहित्य के भौतिक, दार्शनिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक आदि परिपार्श्वों से सम्बंध रखने वाली सामग्री भी प्राप्त करेंगे और इनसे तथा लौकिक जीवन से मिलने वाली प्रेरणाओं

का अभिनंदन करेंगे'।" अज्ञेय ने 'विशुद्ध साहित्यिक विषय' का प्रश्न उठाया है जो कि समीचीन है । आज भी यह साहित्य की परिधि को स्पष्ट करने के लिए मार्गदर्शक की तरह है । साहित्य पर विचार करते समय साहित्य के भौतिक, दार्शनिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक आदि परिपार्श्वों से सम्बंध रखने वाली सामग्री पर भी विचार करना चाहिए । इसलिए इनसे जुड़े विषय भी साहित्यिक पत्रकारिता में शामिल हैं । साहित्य को लौकिक जीवन से प्रेरणा प्राप्त होती है इसलिए उन्हें भी साहित्यिक पत्रकारिता के विषयों में शामिल किया जाना श्रेयस्कर है । अज्ञेय ने नया प्रतीक में उक्त कथनों को उद्धृत करते समय कुछ शब्दों को जोड़ा है और एक शब्द बदल दिया है तथा प्रस्तुति में बदलाव ला दिया है । नया प्रतीक के प्रसंग में रमेशचंद्र शाह द्वारा उद्धृत कथनों से यह पता चलता है । 'प्रतिनिधित्व करेगा' की जगह 'प्रतिनिधित्व करने का आयोजन करेगा' वाक्यांश है । परवर्ती शब्दावली अधिक सटीक है । 'आयोजन' में प्रयत्न-पक्ष सुस्पष्ट है, जब कि 'करेगा' में निश्चय! पहले 'प्रसार नियमन' शब्द था, अब प्रचार के साथ योजक लगाकर और नियमन की जगह 'निरसन' का प्रयोग कर भाव को और भी सुस्पष्ट और सटीक अभिव्यक्ति दी गयी है । निरसने से साहित्य पाला पड़ने से मरे पौधे की तरह हो जाता है । 'प्रसार नियमन' में फैलाव की परिधि को परिभाषित कर, कटायी छँटायी कर सीमित करने का भाव निहित है ।

प्रतीक की चिंता के केंद्र में पाठक भी था । 'प्रवेशांक' का सम्पादकीय मुख्यतः पाठकों को ही सम्बोधित है । 'संयोजना' का लेखक "इसकी गुंजाइश रखना चाहता था कि 'सम्पादकीय' की निर्वैयक्तिक दूरी से आगे आकर वह पाठकों से सीधे-सीधे दो बात कर सके, क्योंकि उसे यह आवश्यक जान पड़ रहा था कि 'प्रतीक' के पीछे जो उद्योग, जो योजना और जो आदर्श निहित है, वह पाठक की आलोचक बुद्धि को ही नहीं, संग्राहक संवेदना को भी छू सके; कि उसके साथ हमारा सम्बंध...भावक और रसिक का सम्बंध हो ।"[14] इस तरह पाठकों से सीधे-दो बातें करना, उसकी आलोचक बुद्धि और संग्राहक संवेदना को छूना और उसके साथ भावक और रसिक का सम्बंध बनाना भी प्रतीक के उद्देश्यों में था । यहाँ अज्ञेय सम्पादक धर्म के साथ-साथ रचनाकार-आलोचक की दृष्टि से पाठकीय संवेदना और रचना के अंतःसम्बंध को भी उद्घाटित कर रहे हैं । यह आवश्यक भी था, क्योंकि कविता में प्रयोग वैचित्र्य के कारण सम्प्रेषणीयता की शिकायत पाठकों की ओर से आ रही थी । अज्ञेय ने अपने समकालीन साहित्य के संदर्भ में रचनाकार, रचना और सहृदय पाठक के सम्बंध को विचार के लिए प्रस्तुत कर नए मानदंड प्रस्तावित किए । साहित्यिक पत्रकारिता का एक धर्म है समकालीन भाव बोध को पहचानना! स्पष्ट ही इसके लिए समालोचकीय संवेदना और रचनात्मक प्रतिभा का योग समकालीन साहित्य की समकालीनता की परख करने में सहायक हो सकता है । सम्पादक-रचनाकार अज्ञेय ने यह सम्भव कर दिखाया ।

प्रतीक के पहले अंक के सम्पादकीय 'संयोजना' में प्रतीक की व्यंजना को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि 'वह देश की स्वाधीन साहित्यिक चेतना का प्रतीक है ।' यहाँ

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 15 Issue 04, April 2025,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081 UGC Approved
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

साहित्यिक चेतना को स्वाधीनता और देश के संदर्भ में चिह्नित किया गया है ।यहाँ अज्ञेय का मूल्य बोध भी व्यंजित हुआ है और साहित्य चिंतन भी! सम्पादकीय में व्यक्त 'सत्साहित्य' और 'परम्परा का मंडन' इसी से जुड़ी हुई बातें हैं ।'प्राचीन मर्यादाओं को भीतर से प्रसृत करके उदार बनाने' की बात भी की गयी है ।स्पष्ट ही यहाँ साहित्यिक पत्रकारिता साहित्य चिंतन की अभिव्यक्ति का माध्यम भी बनी है । अज्ञेय के साहित्य चिंतन को समझने के लिए प्रतीक का अनुशीलन आवश्यक है । उनकी साहित्यिक पत्रकारिता ने साहित्य मीमांसा और रचनात्मकता दोनों को ही गति दी ।सम्पादकीय का बल प्रयोगशीलता पर भी है ।यह आवश्यक था, क्योंकि प्रयोगशीलता ने ही छायावादोत्तर कविता और फिर नयी कविता को सम्भव बनाया ।इस प्रसंग में रामस्वरूप चतुर्वेदी की यह टिप्पणी उल्लेखनीय है, 'इतिहास के कई दौरों को संक्षिप्तिकृत रूप में रखकर गति को द्रुततर बनाने का कुछ भाव सारी योजना में लक्षित होता है।'[15] आज हिंदी कविता के इतिहास के जिस दौर को 'प्रयोगवाद' के नाम से जाना जाता है, "प्रतीक पत्रिका से उसे बल मिला ।"[16]

कुल मिलाकर इस "संक्षिप्त-सी प्रकाशन अवधि में 'प्रतीक' ने हिंदी साहित्य को नयी उन्मुखता दी । ऐसा नहीं कि 'प्रतीक' में सब कुछ नया साहित्य-नयी प्रवृत्तियों का साहित्य- छपता रहा, पर सारे आयोजन के केंद्रों में नया साहित्य था, यह स्पष्ट देखा जा सकता है । नए साहित्य की यह प्रमुखता उत्तरोत्तर बढ़ती ही गयी ।अगले सप्तकों के कवि अधिकतर 'प्रतीक' के माध्यम से प्रकाश में आए ।"[17] नामवर सिंह ने 'प्रतीक' की यात्रा को इस रूप में याद किया है, "आरम्भ में 'प्रतीक' की दृष्टि...व्यापक थी, किंतु वह क्रमश उसके सम्पादक सच्चिदानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' की विशिष्ट साहित्यिक अभिरुचि के अनुरूप नव लेखन की अगुआई करने वाली पत्रिका बनकर रह गयी और 'कल्पना' की तरह दीर्घजीवी न हो सकी ।"[18] वस्तुतः अज्ञेय की विशिष्ट साहित्यिक अभिरुचि ही उल्लेखनीय है ।'अनुरूप' इस प्रसंग में अनुल्लेखनीय है । इससे एकरूपता का भ्रम उत्पन्न हो सकता है ।अज्ञेय "मेरी स्वाधीनता: सब की स्वाधीनता" के पक्षधर रहे । प्रतीक पत्रिका दीर्घजीवी भले न हुई हो, उसका ऐतिहासिक महत्व निर्विवाद है ।प्रतीक ने कम समय में ही हिंदी साहित्य के विकास को अपेक्षित गति दी ।

विद्यानिवास मिश्र ने 'प्रतीक' के वैशिष्ट्य को उद्घाटित करते हुए लिखा है कि अज्ञेय ने "प्रतीक के माध्यम से कला, संस्कृति और साहित्य के अंतरवलंबन का एक सर्वांगीण संदेश रखा ।प्रतीक का दायरा बहुत ही विस्तृत था..."[19] नामवर सिंह ने 'प्रतीक' का मूल्यांकन करते हुए कहा है- "प्रतीक बहुत अच्छी पत्रिका थी ।इस ने कविता और कहानियों की जो नयी धारा थी, उसको स्थापित किया ।" विद्यानिवास मिश्र ने भी प्रतीक के महत्व के बारे में लिखा है कि "आज जो भी नयी पीढ़ी के रूप में प्रतिष्ठित हुए हैं, उनमें से अधिकांश की प्रतिभा का उन्मीलन प्रतीक में हुआ ।" अशोक वाजपेयी ने प्रतीक का मूल्यांकन करते हुए लिखा है -"अज्ञेय ने 'प्रतीक' को जिस तरह सुरुचि और परख का अचूक प्रतिमान बनाया था

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 15 Issue 04, April 2025,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081 UGC Approved
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

उस तरह का गौरव दूसरी कोई पत्रिका आज तक नहीं पा सकी ।"[20] अच्युतानंद मिश्र ने रघुवीर सहाय के इन कथनों को उद्धृत किया है-"प्रतीक बंद होने के बाद हठात् यह मालूम हुआ कि अपने को कहने का, अपने को पहचानने का बहुत बड़ा साधन छिन गया । ऐसा सोचने वालों में बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सेठ गोविंददास, धर्मवीर भारती, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, शमशेर और नागार्जुन जैसे लोग थे । प्रतीक तो बंद हो गया, लेकिन उसने जो ऊर्जा फैलायी थी वह नए कवियों में अपने-अपने ढंग से विकसित होती रही ।"[21] प्रतीक के बंद होने पर उस समय रिक्तता का अनुभव किया गया और हिंदी साहित्य के विकास में उसके अवदान को चिह्नित किया गया । यही प्रतीक का ऐतिहासिक महत्व है ।

रचनाकार अज्ञेय के पत्रकार रूप में एक नैरंतर्य लक्षित किया जा सकता है । जैसे ही वे एव्रीमैन्स से अलग हुए वैसे ही उसी महीने उन्होंने प्रतीक को नए सिरे से निकालने का संकल्प व्यक्त किया और मित्रों-सहकर्मियों से विमर्श कर दिसम्बर 1973 से 'नया प्रतीक' (मासिक) निकालना आरम्भ कर दिया । रमेशचंद्र शाह के अनुसार नया प्रतीक 1979 के अंत में बंद हुआ । रामकमल राय ने लिखा है- " 'नया प्रतीक' के बंद होने का मुख्य कारण आर्थिक था । उससे लगातार घाटा हो रहा था । अंतिम वर्ष में तो 2100 रुपए का घाटा हुआ था । पत्र प्रारम्भ में तो राधाकृष्ण प्रकाशन के सहयोग से चला किंतु तीन-चार अंकों के पश्चात् वे लोग हट गए और आधी-आधी साझेदारी के आधार पर यह नेशनल पब्लिशिंग हाउस के साथ निकला था ।" लेकिन रामकमल राय ने प्रबंध संपादिका और अज्ञेय की सहचरी इला डालमिया का यह कथन उद्धृत किया है कि "अपने अनुभव की माँग पर ही उन्होंने 'नया प्रतीक' को डुबोया ।" यह कथन बड़ा ही मार्मिक है । प्रथम अंक में जो बातें कही गयी हैं उसी में नया प्रतीक के डुबोए जाने का रहस्य छिपा है । पत्रकारिता एक व्यवसाय भी है और व्यवसाय में लोक रूचि का ध्यान अनिवार्य रूप से रखना पड़ता है, लोक व्यवहार का ध्यान अनिवार्य रूप से रखना पड़ता है। व्यावसायिक मनोवृत्ति की अपनी शर्तें होती हैं । अज्ञेय इन सब बातों से दूर रहना चाहते थे। रामकमल राय ने कुछ अन्य बातों का उल्लेख भी किया है जिनसे पता चलता है कि नया प्रतीक के विकास में अवरोधक तत्व भी थे- " 'नया प्रतीक' के विरोध के लिए बाक़ायदा बैठकें की गयीं और विरोध के निर्णय लिए गए ।" और "कई लोगों ने तो इसलिए भी असहयोग का रुख़ अपनाया कि उनका नाम वात्स्यायन के नाम के साथ न जुड़ जाए । जैसे कुँवरनारायण का नाम जो सम्पादक-मंडल में भी था ।"

नया प्रतीक को सर्जन और चिंतन का प्रतिनिधि मासिक के रूप में विकसित करने का संकल्प व्यक्त किया गया । प्रथम अंक में कही गयी बातें अज्ञेय की साहित्य-दृष्टि को स्पष्ट करती हैं और पत्रकारिता दृष्टि और साहित्यिक पत्रकारिता के उद्देश्य को भी- "लोक रूचि का अनुकरण करने और हर किसी की पीठ और मौक़ा पड़ने तलुवे सहलाने की रज़ामंदी का जो निहित आश्वासन हो सकता है उसके लिए प्रतीक तैयार नहीं है और न होगा, प्रतीक

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 15 Issue 04, April 2025,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081 UGC Approved
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

व्यवसायी पत्र नहीं होगा, लोक रूचि का अनुचारी नहीं होगा, बल्कि इसके विपरीत वह यह सिद्ध करके दिखाना चाहेगा कि व्यवसाय या लोक रूचि के सामने आत्मसमर्पण किए बिना भी समकालीन साहित्य को सामने लाने का कार्य किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में नया प्रतीक इस आस्था की आवृत्ति करेगा कि साहित्यिक मूल्य अपना आत्यंतिक महत्व रखते हैं और उस पर आधारित साहित्य ही टिका रहता है।"[22] यहाँ भी अज्ञेय ने स्वतंत्रचेता व्यक्तित्व का परिचय दिया है। लोक रूचि का अनुकरण या अनुचर बनना उन्हें स्वीकार्य नहीं है। व्यवसाय या लोक रूचि के सामने आत्मसमर्पण कर देने से साहित्यिक पत्रकारिता का औचित्य सिद्ध नहीं हो सकेगा। इससे साहित्य के अवदान का उद्घाटन पक्ष सामने नहीं आ पाएगा। साहित्य के मार्गदर्शक रूप की सम्भावनाएँ बनी रहनी चाहिए। साहित्यिक पत्रिका को हर किसी के लिए प्रशंसा या स्वीकृति का भाव नहीं रखना चाहिए-उसे अपने विवेकाधिकर का प्रयोग करना चाहिए। मानदंडों के प्रयोग के क्षेत्र में किसी भी प्रकार से समझौता नहीं करना चाहिए। अन्यथा साहित्यिक पत्रिका की गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है। साहित्यिक पत्रिका को चापलूसी का साधन भी नहीं बनने देना चाहिए। साहित्यिक पत्रिका का लक्ष्य निरा व्यवसाय नहीं होना चाहिए क्योंकि इससे साहित्य के अवमूल्यन की आशंका उत्पन्न हो सकती है, प्रतिबद्धता में कमी आ सकती है। समकालीन साहित्य को सच्चे अर्थों में सामने लाने के लिए उपरोक्त बातों का ध्यान आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। ये आवश्यक शर्तें हैं। साहित्यिक मूल्य साहित्यिक पत्रकारिता के लिए अनिवार्य शर्त है-इसी शर्त पर रचनाएँ स्थायी साहित्य में शामिल हो पाती हैं। इस तरह सम्पादन वक्तव्य साहित्य मीमांसा का माध्यम बनकर भी उपस्थित होता है। रचनाकार-आलोचक अज्ञेय को सम्यक् रूप से समझने के लिए और अवदान को जानने के लिए उनके पत्रकार रूप का अनुशीलन अनिवार्य है। निस्संदेह, 'नया प्रतीक' पत्रिका, विद्यानिवास मिश्र के शब्दों में, "नयी आकांक्षाओं और नयी प्रतिभाओं की अभिव्यक्ति के लिए एक सशक्त माध्यम" बनकर उभरी। 'नया प्रतीक' के माध्यम से अज्ञेय ने साहित्यिक और वैचारिक पत्रकारिता को केंद्र में प्रतिष्ठित किया। नया प्रतीक के दौर की एक घटना का उल्लेख रामकमल राय ने किया है। यह उल्लेखनीय है। इससे पत्रिका की साहित्यिक-सांस्कृतिक परिधि और सम्पादक के स्वाधीन विवेक का पता चलता है। शंभुनाथ ने नया प्रतीक को एक पत्र भेजा जिसमें, रामकमल राय के शब्दों में, "आपातकाल के दमन की विशद चर्चा थी; अभिव्यक्ति के ऊपर अंकुश की तीव्र भर्त्सना भी। नया प्रतीक ने उसे पूरा का पूरा छाप दिया।" 'प्रतीक' के दूसरे अंक के सम्पादकीय में अज्ञेय ने लिखा है - " 'प्रतीक' के दोनों अंकों में जो लेख छपे हैं, उनमें से कुछ एक अवश्य आपको सोचने के लिए चुनौती देंगे।" साहित्यिक पत्रकारिता का यही वैशिष्ट्य है।

लेकिन 'नया प्रतीक' में प्रतीक वाली बात कम ही थी। हिंदी साहित्य और पत्रकारिता के विकास में प्रतीक ने जितना योगदान किया, नया प्रतीक उतना योगदान नहीं कर पाया। डॉक्टर कृष्णबिहारी मिश्र ने लिखा है, "नया प्रतीक को वात्स्यायनजी प्रतीक नहीं बना पाए

।"[23] प्रभाकर माचवे ने भी नया प्रतीक के बारे में कुछ इसी तरह के विचार व्यक्त किए हैं - "आशा थी कि पुराने प्रतीक जैसा यह निकलेगा और उसमें हर अंक में कोई ताज़ा और चौंकाने वाली चीज़ रहेगी पर वह 'चमत्कृति' वाली बात इसमें कम मिली...ख़ैर हिंदी में जब एक भी नियमित चलनेवाली अच्छी साहित्यिक मासिक पत्रिका नहीं है, 'नया प्रतीक' ग़नीमत है आशा-स्थान है ।"[24] उन्होंने इसकी विषयवस्तु पर टिप्पणी करते हुए लिखा है, " 'भर्ती का पृष्ठ' ज़रूर 'कुट्टिचातनी' लेखनी का पूरा दंश और चटकारा लिए हुए है । कभी-कभी एकाध कविता मन को छूती है । विद्यानिवास जी तो हमेशा ही नयी, मौलिक उद्भावना करते हैं । उनका क्षेत्रेश जी पर लेख ऐसा था कि एक बंगाली से पढ़वाया तो वे रो दिए । अनुवाद काफ़ी होते हैं, जो ठस से हैं । 'अज्ञेय' जी का सम्पादकीय कभी-कभी बड़ा अच्छा होता है, जैसे उर्दू पर । पर उनके दार्शनिक 'प्रेम ऊर्जा' आदि पर मेरे पल्ले नहीं पड़ते ।" प्रभाकर माचवे की यह टिप्पणी भाव पक्ष को कम ही उकेरती है । वस्तुतः 'नया प्रतीक' पुनर्मूल्यांकन की अपेक्षा रखता है, तभी उसके महत्व और अवदान का अंकन सम्भव हो पाएगा । अज्ञेय अपने कार्यों की सार्थकता और प्रयोजनीयता के प्रति काफ़ी सजग थे । जैसे ही उन्हें लगता था कि जो कार्य वे कर रहे हैं वह ऐतिहासिक महत्व का नहीं है तो उससे विरत हो जाते थे । यह सत्य है कि नया प्रतीक साहित्य और साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रतीक की तरह बहुचर्चित न हो सका, लेकिन उसकी सार्थकता और महत्ता संदेह से परे है । वस्तुतः अज्ञेय के प्रयत्नों को इस रूप में भी देखा जाना चाहिए कि साहित्यिक पत्रिका प्रकाशन का कार्य विशेष महत्व रखता है । यह एक सांस्कृतिक कर्म है । सम्पादक और पत्रिका में शामिल सहयोगी लेखक मिलकर इस कर्म को सम्पन्न करते हैं । अज्ञेय साहित्यकार होने के नाते इससे परिचित थे । उन्होंने 'आत्मपरक' में साहित्यिक पत्रिकाओं की 'उपयोगिता' पर अपना चिंतन-मनन प्रस्तुत किया है । उन्होंने पत्रिकाओं को पत्र पुस्तकों का गौरव प्रदान करते हुए लिखा है कि पत्र पुस्तकें "वर्तमान जीवन की एक माँग पूरी करती हैं ।" पत्र पुस्तकें "वे उन समकालीन साहित्य प्रवृत्तियों को प्रतिबिम्बित करती है जो अन्यथा ओझल ही रहतीं"। पत्र पुस्तकें "स्वाधीनचेता, रूढ़िविरोधी और आदर्शवादी" लेखक/लेखकों की आत्माभिव्यक्ति का साधन होती हैं । इस वक्तव्य में पत्रकार-सम्पादक और साहित्यकार अज्ञेय का स्वयं का अनुभव भी शामिल है और साहित्य-मीमांसक एवं समालोचक अज्ञेय का भी! विचारणीय प्रश्न यह भी है कि प्रतीक जैसी प्रतिष्ठा और महत्ता का गौरव नया प्रतीक को क्यों नहीं प्राप्त हो सका? इसका एक सम्भावित उत्तर यह हो सकता है कि अज्ञेय की साहित्य संवेदना का विकास जिन संदर्भों में हुआ था वे संदर्भ बहुत पीछे छूट गए थे । ऐसे में अनुमान लगाया जा सकता है कि नया प्रतीक के समय के परिपार्श्वों की अचूक समझ पहले जितनी प्रासंगिक न रही थी । युवा पीढ़ी के समूचे परिपार्श्वों और धड़कन की सम्यक् समझ के लिए, उनके समय से पूरी तरह से जुड़े रहने के लिए कठोर परिश्रम, तपस्या, अटूट धैर्य और सतत गम्भीर तत्कालीन सहित्यानुशीलन दृष्टि का होना अपेक्षित है। उम्र के जिस पड़ाव पर अज्ञेय थे वहाँ समकालीन

भाव-बोध में सम्यक् प्रवेश दुष्कर-सा था । संभवतः नवभारत टाइम्स से जुड़ने की स्वीकृति के मूल में यह भी एक कारण रहा होगा कि अपने समकालीन जीवन और जगत् को सम्यक् रूप से समझा जा सके । लेकिन अनुभव एवं भावानुभूति की सम्यक् रूप से प्राप्ति दुर्लभ हो गयी सी प्रतीत होती है । अज्ञेय के नवभारत टाइम्स के बाद पत्रकारिता से जुड़ने के प्रमाण नहीं मिलते । अज्ञेय ने पत्रकारिता से अलग जो सम्पादन कार्य विपुल मात्रा में उसकी विवेचना भी आवश्यक है । अज्ञेय के व्यक्तित्व को विराट बनाने में इन सबका भी योग है और उनका भी जो इनमें शामिल हुए !

संदर्भ

I. शिखर से सागर तक, पृष्ठ संख्या- 242
II. स्मृति-लेखा, पृष्ठ संख्या- 80
III. सम्पादक- विष्णु नागर/असद ज़ैदी: रघुवीर सहाय, आधार प्रकाशन, पंचकूला हरियाणा, प्रथम संस्करण: 1993, पृष्ठ संख्या- 207
IV. शिखर से सागर तक, पृष्ठ संख्या- 242
V. सम्पादक- विश्वनाथ प्रसाद तिवारी: अज्ञेय, पृष्ठ संख्या- 239
VI. वही, पृष्ठ संख्या- 239
VII. सम्पादक- विद्यानिवास मिश्र: अज्ञेय, राजपाल एण्ड संज़, संस्करण:1990, पृष्ठ संख्या- 16
VIII. शिखर से सागर, पृष्ठ संख्या- 133
IX. लोकमत समाचार, दीपावली विशेषांक, 2003, पृष्ठ संख्या- 17
X. बातों-बातों में, मनोहरश्याम जोशी, पृष्ठ संख्या- 60
XI. अज्ञेय: आत्मपरक, पृष्ठ संख्या- 224, 225
XII. शिखर से सागर तक, पृष्ठ संख्या- 81
XIII. सुरेश शर्मा: रघुवीर सहाय का कवि कर्म, अरुणोदय प्रकाशन, संस्करण: 1992, पृष्ठ संख्या- 160
XIV. डॉक्टर रामस्वरूप चतुर्वेदी: अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, चतुर्थ संस्करण: 2000, पृष्ठ संख्या- 135
XV. वही
XVI. नामवर सिंह, आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण:1990, पृष्ठ संख्या- 110
XVII. अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या, पृष्ठ संख्या- 133
XVIII. नामवर सिंह: कहना न होगा, वाणी प्रकाशन, दिल्ली,1993, पृष्ठ संख्या- 222
XIX. सम्पादक- विद्यानिवास मिश्र: अज्ञेय, पृष्ठ संख्या- 16

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 15 Issue 04, April 2025,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081 UGC Approved
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

XX. **उद्धृत, अच्युतानंद मिश्र: एक पत्रकारिता लीक से हटकर, पृष्ठ संख्या- 32**

XXI. **एक पत्रकारिता लीक से हटकर: नवनीत हिंदी डाइजेस्ट, मुंबई, सं विश्वनाथ सचदेव, जुलाई 2010, पृष्ठ संख्या- 28**

XXII. **आलोक पांडेय द्वारा उद्धृत, अज्ञेय की पत्रकारिता, हिंदी समय, इंटरनेट**

XXIII. **पत्रकारिता: इतिहास और प्रश्न, पृष्ठ संख्या- 17**

XXIV. **सम्पादक- विश्वनाथ प्रसाद तिवारी: अज्ञेय, पृष्ठ संख्या- 243**